International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232, Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 2; Issue 5; September 2016; Page No. 65-67

नैतिक जीवन मूल्य

[1] चारू यादव, [2] डॉ0 रामअवध शस्त्री

[1] शोध छात्रा, जे0 एस0 हिन्दू कालिज, अमरोहा, उत्तर प्रदेश, भारत।
[1] शोध निर्देशक हिंदी विभगाध्यक्ष,जे0एस0 हिन्दू कालिज, अमरोहा, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

मूल्य

साहित्य में प्रयुक्त होने वाला 'मूल्य' शब्दवास्तव में अंग्रेजी के टंसनम शब्द का पर्याय है। यह मूलतः लेटिन के टंसमतमशब्द से उदभूत है जिसका अर्थ है 'अच्छा' और 'सुंदर'। तात्पर्य यह है कि मूल्य शब्द के भावार्थ में शिवं और सुंदरम् समाविष्ट रहते हैं। वह विचार, वह धारणा, वह जीवन दृष्टि जो समस्त मानव–जाति के लिए मंगलमय है, पूर्ण सत्य है, पूर्ण शुभ है और परम सौंदर्य–युक्त है, वही मूल्य है। आज स्थिति तो यह है कि साहित्य और कला के क्षेत्र के अन्य शब्द 'मूल्य'जितनी सशक्त व्यंजना नहीं दे पाते।[1] 'मूल्य' शब्द में किसी भी भाव अथवा, अवधारणा को अपने समग्र गुरूत्व और गांभीर्य सहित अभिव्यक्ति करने की क्षमता है। 'मूल्य' मानव –जीवन के संदर्भ में ही जीवन गृहण और यापन करते हैं। इसी कारण मूल्य चाहे किसी भी क्षेत्र विशेष का तथा पृथक –पृथक हो किंतु वह होता मानवार्थ है। कहा जा सकता है कि मूल्यों की स्थिति मानव सापेक्ष है। इसलिए साहित्यक दृष्टि से मूल्यों को परिभाषित करना मानव जीवन के अभिप्राय को समग्रता में परिभाषित करना है। इस दृष्टि से मूल्य, मानव–जीवन के महत्त्वपूर्ण आदर्श, सिद्धांत या मान्यताएँ हैं जिन्हें पाने के लिए व्यक्ति और समाज दोनो ही सचेष्ट होते है और समाज का जीवन कल्याणकारी और सुखी होता है।

नैतिकता

नैतिकता मूख्यतः आचरण से संबंधित है। मनुष्य का आचरण कैसा होना चाहिए, नैतिकता इस तथ्य पर विचार करती है। हमारा आचरण, व्यवहार और कार्य ऐसे होने चाहिए जिससे अपना भी हित हो और दूसरों को भी किसी प्रकार कष्ट और हानि न हो। परिवार में समाज में देश में सुख शान्ति बनाए रखने के लिए नैतिकता अनिवार्य है। नैतिकता की नीति पर चलकर ही सामाजिक नियंत्रण कायम किया जा सकता है। विकास के लिए सामाजिक नियंत्रण की आवश्यकता होती है और सामाजिक नियंत्रण के लिए नैतिकता की। नैतिकता का संबंध नीति से है। 'नीति' शब्द संस्कृत के 'नी' धातु में 'क्तिन' प्रत्यय के योग से निश्पन्न हुआ है। इसका अर्थ है– आचरण, आचार, औचित्य, निर्देशन, दिददर्शन, प्रबंध आदि। नीति का अग्रेजी शब्दडवतंसपजल है। डवतंसपजल ग्रीक शब्द डवतमे से बना है। इसका अर्थ है– रीति अथवा प्रचलन। अतः नीति का सम्बन्ध प्रचलन, रीति अथवा आदत से है। जिसमें औचित्य, शालीनता, कुशलता, बुद्धिमत्ता, युक्ति, योजना और उपाय हों। नियम के अनुसार किया हुआ आचरण व्यक्ति और समाज दोनों के लिए कल्याणप्रद है। भारत में नीति के अन्तर्गत वे नियम सम्मिलित किए गए है, जिन पर चलने से व्यक्ति और समाज दोनों का शाष्वत और सर्वाग कल्याण सम्भव है।

शुक्र नीति और कामन्दकीय नीति के अनुसार– 'नीति' शब्द 'नी' धातु से निर्मित है। इसका अर्थ है–समाज अथवा व्यक्ति को कुमार्ग से हटाकर सन्मार्ग की ओर ले जाना। इसलिए कहा गया है– 'तमसो मा ज्योतिर्गमय।'

प्राचीन वैदिक काल के दर्शन से लेकर समकालीन भारतीय दर्शन पर्यन्त अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि नैतिक चिन्तन धारा में यद्यपि क्रान्तिकारी परिवर्तन होते आए हैं, फिर भी अधिकांश विचार, सनातन ही रहें है। भारतीय नीतिशास्त्र के प्राचीनतम ग्रन्थ वेदों के नैतिक चिन्तन में ही नीतिशास्त्र का सार है। भारतीय नैतिक मूल्यों के निर्देशन में रामायण और महाभारत की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। इन ग्रन्थों में धर्म और अधर्म, नीति और अनीति के मार्ग पर चलने वालों के अच्छे और बुरे परिणामों की चर्चा है। इसी प्रकार भगवद्गीता में मानव के समक्ष जिन नैतिक उपदेशों को रखा गया है, वे आधुनिक युग में भी प्रासंगिक हैं। गीता में निष्काम कर्मयोग विश्वबंधुम्व की भावना तथा परमश्रेय की प्राप्ति का संदेश निहित है। आज के युग में जबकि मानव –समाज को भयंकर खतरा है, गीता के संदेशों का स्वीकार करके तथा उनका पालन करके ही युद्ध की विभीशिका को टाला जा सकता है। तभी विश्व में शान्ति एवं विश्वबन्धुत्व की स्थापना की जा सकती है।''[2]

इसमें संशय नहीं है कि नैतिकता मनुष्य की उन्नति का आधार है, नैतिकता से रहित व्यक्ति की स्थिति पशु के समान है। नैतिकता के बिना कोई भी व्यक्ति, समाज या देश अवश्य ही पतोन्मुख हो जाएगा। इतिहास इस सत्य की घोषणा कर रहा है कि नैतिकता हमारा व्यापक गुण है और इसे किसी भी कीमत पर हमें नहीं छोड़ना चाहिए। गाँधी जी के अनुसार नीति में ही धर्म सम्मिलित है। नीति रूपी बीज को जब तक धर्म रूपी जल का सिंचन नहीं मिलता, तब तक उसमें से अच्छा आचरण रूपी अंकुर नहीं फूटता। प्राचीन भारतीय दार्शनिकों के समान गाँधी जी ने जगत में एक नैतिक व्यवस्था मानी है। इसी आस्था के आधार पर वे अहिंसा का इतना समर्थन करते थे।उनके अनुसार ईश्वर साक्षात्कार का एक मात्र साधन अहिंसा है। अहिंसा और प्रेम से ही ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है। डा0 एस. राधाकृष्णन् के अनुसार– नैतिकता को व्यक्ति के बौद्धिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक उन्नति के विकास का आधार माना गया है। नैतिकता सद्गुणों का समन्वय मात्र ही नहीं, वरन् यह एक व्यापक गुण है तथा इसका प्रभाव मनुष्य के समस्त क्रिया–कलापों पर होता है और साथ में व्यक्ति का व्यक्तित्व का भी प्रभाव होता है।'

नैतिकता के सम्गन्ध में पाश्चात्य विचारकों का मत भी दृष्टव्य है। कॉन्ट का कहना है कि शास्त्र नियमों का पालन में नैतिकता विद्यमान रहती है और नैतिक प्रशिक्षण के द्वारा ही पाशविक स्वभाव को मानवीय स्वभाव में परिवर्तित करके अनुशासित करना ही नैतिकता है।

अतः स्पष्ट है कि मानव आचरण का आदर्श, नैतिक चेतना है अस्तु मनुष्य की नैतिक चेतना सम्बन्धी सभी बातें नीतिशास्त्र का विषय हैं। इसके अन्तर्गत मनुष्य के कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य उसके कर्मों के उचित–अनुचित, शुभ–अशुभ, धर्म–अधर्म आदि का विचार सम्मिलित है।

आचरण को दिशा निर्देश देने वाले तत्वों को नैतिक मूल्य कहा जाता है। भारतीय समाज की सदैव से ही सत्य के प्रति निष्ठा रही है। धर्म में उसकी गहरी आस्था रही है। धर्म सम्मत जीवन होने पर व्यक्ति जो भी करता है, वह नैतिक हो जाता है। इसलिए नैतिकता के लिए नीति की शिक्षा ही नहीं धर्म की शिक्षा भी आवश्यक है। नैतिकता का मूल इस तथ्य में है कि व्यक्ति समाष्टि के हित में ही अपना हित ढूँढें। स्वार्थ के स्थान पर परमार्थ पाए। इस प्रकार मूल्यों की समाष्टि में ही धर्म का सही स्वरूप निहित है।

सदाचार और शुचिता

नैतिक जीवन–मूल्यों में सदाचार और शुचिता का महत्त्वपूर्ण स्थान है। मानव अपने जीवन में जब अनेक विकल्पों मे किसी एक का चयन करता है। और कोई कर्म या आचरण करता है और वह नैतिक निर्णय का विषय है तो वह सदाचार है। सदाचार का अर्थ है– जो आचरण सत् या उचित है। नरेश मेहता के काव्यों में नैतिकता के विषय में पर्याप्त चर्चा हुई है। 'शबरी' में त्रेता काल में धर्म और नैतिकता की नीवं पड़ी ही थी। उस काल में वर्ग सरल रूप में थे–

धर्म और नैतिकता की
तब नींव पड़ी जन–मन में,
थे ब्राह्मण सिर मौर,
तपस्या के कारण सब जन में'[3]

जिन्हें धर्म और नैतिकता के बन्धनों में बंधना स्वीकार नहीं था, ऐसे भी कुछ लोग थे। उन लोगों को राक्षस कहा गया–

जिन्हें न थे स्वीकार धर्म नैतिकता के ये बंधन
आर्य जाति के होने पर भी कहलाए राक्षस गण।''[4]

'सीता समाधि' में कवयित्री राजेश्वरी अग्रवाल के अनुसार सदाचार का देश और उसके निवासियों के लिए अत्यन्त महत्व है। जब हम विदेशी आचार–विचार अपने जीवन में गृहण कर लेते हैं, तब हमारी सद्वृत्तियों पर कुप्रभाव पड़ता है। यह अनुचित है–

'अपने ही उस दिव्य देश में,
रहते दीन हीन नारी नर,
बोल न सकते, सुन नहिं सकते
निज संस्कृति के शबद मनोहर,
थोप विदेशी व्यवहारों को
करता ध्वस्त सदाचारों को।'[5]

भवानी प्रसाद मिश्र के 'कालजयी' में राजमाता शम्पा अशोक को कलिंग के युद्ध को टालने तथा धैर्य रखने के लिए कहती हैं। इस पर अशोक उनकी बात स्वीकार करते हुए कहता है कि निर्मल नीति का व्यवहार किया जायेगा। इस पर राजमाता का उत्तर महत्त्वपूर्ण है। माता की शिक्षा का प्रभाव पुत्र के ऊपर दिखाकर कवि ने नैतिक जीवन मूल्यों को तो संजीव किया ही है साथ ही वर्तमान राजनीतिज्ञों का भी मार्गदर्शन किया है–

'माता, तुम्हारे वचन, दुर्दिन में शुभक्षण में,
अच्युत रखेंगे मुझे,
निरलस और सावधान,
मंगल तुम्हारी इच्छा, निर्मल रहेगी सदा,
दण्डनीति, कूटनीति, भेदनीति बरती कभी,
तो में उन्हें बरतूँगा, रखकर दृष्टिपथ में सदा,
सच्चा नैतिक विधान'।।6

राज्य व्यवस्था में अपने व्यक्तिगत निर्णयों को नैतिकता और सदाचार कहकर दूसरों पर थोपा नहीं जा सकता है। 'शम्बूक' में जगदीश गुप्त इसी तथ्य को प्रस्तुत करते हुए कहते हैं–

'करे न्यायालय, तुम्हारा मत सदा स्वीकार,
बस यही है क्या तुम्हारे न्याय का अधिकार ?
व्यक्तिगत निर्णय, सभी को मान्य हो हर बार,
क्या यही होगा, तुम्हारी नीति का व्यवहार? 7

'आहत आत्माएँ में डॉ0 देवराज गाँधी के सिद्धान्तों को वाणी प्रदान करते हुए चिन्ता व्यक्त करते हैं कि हमारा देश आज उस कगार पर पहुँच गया है कि लोगों को केवल अपने स्वार्थ से बढकर कुछ नजर नहीं आता है इसके लिए उन्हें यदि दूसरों को कष्ट भी देना पड़े तो वे इस बात से भी नहीं चूकते हैं, बस अपना स्वयं का काम बन जाए। यही कारण है आज समाज में देश में भ्रष्टता बढती ही जा रही है, लोग नास्तिक बुद्धि के हो रहें हैं, हिंसा को बढावा मिल रहा है, साम्प्रदायिक दंगे हो रहे हैं, नेता भ्रष्ट हो गए हैः

कूट–शूर भारत की उर्वर भूमि में,
द्वेश–बीज छितराते, मुहँ से दुहराते
आदर्शों के बड़े सूत्र चल सागर के
पार गए जो इशं उन्हें सदबुद्धि दे।8

मानव जीवन में शुचिता का बहुत महत्त्व है और यह शुचिता आती है– संस्कृति, कथा, कला, कविता के द्वारा। ज्वाल संकल्पित में श्याम सुन्दर घोश कहते हैं–

''यह संस्कृति, कथा, कला कविता,
है जिनको मानव से ममता,
जो जीवन को शुचि रूप दिया करती है।''[9]

हमारी संस्कृति में कर्त्तव्य निष्ठा पर बहुत अधिक बल दिया गया है। महाभारत में 'जीवन को कर्मभूमि' कहा गया है। इस लोकमें मनुष्य शुभ व अशुभ कर्मो का परिणाम भोगता है। जगदीश गुप्त ने 'शम्बूक' में कहा है कि कर्म का परिणाम चाहे अच्छा हो या बुरा, किन्तु शुभ कर्म कभी किसी के मार्ग में बाधा नहीं डालता है–

''सदा अच्छा–बुरा परिणाम,
एक का शुभकर्म,

क्यो बाधक बने फिर दूसरे का मार्ग दूसरे का मार्ग में, हे राम!10
मनुष्य का यह प्रारब्ध है, नियति है कि वह कर्म करता जाए–असंग भाव से। भले ही वह कर्म निर्मम हो, धारदार अस्त्र की भाँति उसे नष्ट कर दे। कवि के अनुसार कर्म से किसी भी व्यक्ति को मुक्ति नही मिल सकती है–

''क्या यही है मनुष्य का प्रारब्ध ?
कि, कर्म, निर्मम कर्म, केवल असंग कर्म
करता ही चला जाए ? भले ही वह कर्म,
धारदार अस्त्र की भाँति, न केवल देह,
बल्कि, उसके व्यक्तित्व की, रागात्मिकाओं
को भी काट कर रख दे।''[11]

'महाप्रस्थान' में नरेश मेहता ने बताया है कि मनुष्य को कर्त्तव्य से नहीं भागना चाहिए।

''एक तात्कालिक धर्म भी होता है, कर्त्तव्य!!
जब युद्ध कर्त्तव्य हो गया, तो अनासक्त होकर,
वह भी किया, इसलिए उन दिनों की वे
स्मृतियाँ, मुझे भी स्मरण तो आती है, पर सालती नहीं।''[12]

युधिष्ठिर का कहना है कि–दुर्योधन ने हम पाण्डवों का घोर अपमान किया द्रौपदी का चीर हरण करके। किन्तु सामने वाला यदि आवेग में पशु के समान व्यवहार करे तो विवेक के रहते उसके पुनः मनुष्य

होने तक प्रतीक्षा करनी चाहिए। किन्तु तात्कालिक अर्थात् उसी क्षण जो धर्म हमें निर्वाह करना था वह था युद्ध। और इसीलिए असंग भाव से युद्ध किया। युधिष्ठिर का तात्पर्य है कि युद्ध नहीं चाहता था किन्तु परिस्थिति विशेष को देखकर शीघ्र ही उन्हें युद्ध का निर्णय लेना पड़ा क्योकि उस समय युद्ध एक कर्त्तव्य हो गया था। इसी कारण अब उन्हें युद्ध की वे दर्दनाक स्मृतियाँ कष्ट नहीं पहुँचाती है।

समय बड़ा बलवान है जो आगे बढ़ना तो जानता है, किन्तु पीछे लौटना नहीं। मनुष्य को समय व्यर्थ नहीं गँवाना चाहिए। समय मनुष्य का बहुत बड़ शिक्षक है। समय से मनुष्य को अनुभव व ज्ञान प्राप्त होता है। भवानी प्रसाद मिश्र के 'कालजयी' में बिन्दुसार महारानी शम्पा से इसी महत्त्वपूर्ण तथ्य को बताते हैं–

यह काल बली /जो बढ़ता आता है/
मुझको सौ–सौ/कर्त्तव्य सुझाता है/
जैसे राज्यरोहण का/क्या होगा/
शम्पे, जो आता है/ सो जाता है।''[13]

नातिकारों ने स्वार्थ की कटु आलोचना की है। नैतिक मूल्यों में आत्म संयम का प्रमुख स्थान है। आत्म संयम से आशय आत्मा पर नियंत्रण रखने से है। 'सीता समाधि' में राजेश्वरी अग्रवाल भारत के लोगों कोआत्म संयमी बताती हैं।

''सुखी शान्त निर्भय रहते जन,
जलती नहिं ईर्श्या मन दहती।
जीते स्वाभिमानयुत श्रम से
नहीं किसी को धोखा भाता।।''[14]

सच्चा मानव उदारमना होता है वह दूसरों के दुःख से दुःखी उठता है। वह सभी ओर सुख, शान्ति और समृद्धि देखना चाहाता है।

''कर्ण का उदार मन व्यथित हो जाता था
दूसरों के दुःख से /सोचता था स्वर्ग अगर
कल्पना है, दूँगा उसे मैं रूप/फैला दूँगा
सद्भाव सारे ही राज्य में/''[15]

'सूर्यपुत्र' में जगदीश चतुर्वेदी ने कर्ण को दूसरों के दुःख से दुःखी दिखाया है। कर्ण प्रत्येक मानव को सुखी देखना चाहता है वह कहता है यदि कहीं स्वर्ग है तो मैं उसे धरती पर ही साकार कर दूँगा। स्वर्ग की कल्पना को साकार कर दूँगा। इसी के साथ–साथ मनुष्य का इन्द्रियों पर विजय पाना भी आवश्यक है। इन्द्रियों का दमन ही ओज एवं तेज का साधन है।

''जानिअ तबहिं जीव जग जाना/
जब जब विषय विलास विरागा।।''[16]

तुलसीदास जी कहते हैं कि जीव को तभी जागा हुआ मानिए जब उसे विषय–वासनाओं से वैराग्य हो जाए।

निष्कर्ष

नैतिक जीवन मुल्यों के अन्तर्गत अहंकार की पूर्णतः सामाप्ति से मनुष्य स्वयं को ईश्वर के निकट ले आता है। क्षमाशीलता, कृतज्ञता, परोपकार, करूणा आदि गुण मनुष्य को देवता सदृश बनाते हैं। यदि इन्हीं सब गुणों को प्रत्येक मनुष्य अपने जीवन में उतार ले तो मनुष्य देवता सदृष हो जायेगा। मनुष्य के लिए आवश्यक है कि अपने प्राचीनतम साहित्य, धर्मग्रंथों और महापुरूषों के आचरण द्वारा प्राप्त नैतिकता के आदर्शों को आत्मसात करे और यह अच्छी तरह समझे कि बिना नैतिकता के उसका सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक नियंत्रण स्थापित नहीं हो सकता और न व्यक्ति में अनुषासन का आगमन होगा। अतः नैतिक जीवन–मूल्यों को प्रत्येक व्यक्ति को आत्मसात करने की आवश्यकता है। जिससे देश में समाज में शान्ति और सद्भाव कायम हो सके।

संदर्भ

1. नयी कविता : मूल्य मीमांसा : डॉ0 बैजनाथ सिंघल, पृ0 116
2. बौद्ध एवं जैन नीतिशास्त्र : सुनन्दा कुमारी, पृ0 42, 45
3. शबरी : नरेश मेहता, पृ0 4
4. वही, पृ0 4
5. सीता समाधि : राजेश्वारी अग्रवाल, पृ0 158
6. कालजयी : भवानी प्रसाद मिश्र, पृ0 23
7. शम्बूक : जगदीश गुप्त, पृ0 60
8. आहत आत्माएँ : डॉ0 देवराज, पृ0 111
9. ज्वाल संकल्पित : श्याम सुन्दर घोश, पृ0 20
10. शबारी : नरेश मेहता, पृ0 71
11. प्रवाद पर्व : नरेश मेहता पृ0 19
12. महाप्रस्थान : नरेश मेहता, पृ0 99–100
13. कालजयी : भवानी प्रसाद मिश्र, पृ0 32
14. सीता समाधि : राजेश्वरी अग्रवाल, पृ0 15
15. सूर्यपुत्र : जगदीश चतुर्वेदी, पृ0 58
16. रामचरिमानस, अयोध्याकाण्ड : तुलसीदास, पृ0 95